संस्कृत व्याकरण शास्त्र में पाणिनीय अष्टाध्यायी का महत्व

पंकज शर्मा
शोधार्थी, संस्कृत-विभाग
हिमाचल प्रदेश केन्द्रीय विश्वविद्यालय, धर्मशाला

शोध सारांश:
पाणिनीय अष्टाध्यायी व्याकरण शास्त्र का एक विलक्षण ग्रन्थ है । महर्षि पाणिनि ने अपनी सूक्ष्मेक्षिका द्वारा संस्कृत के अशेष शब्द भण्डार का अवलोकन कर, उन्हें सूत्र शैली में निबद्ध किया । पाणिनीय सूत्र विश्व साहित्य की अमूल्य निधि है । चतुर्दश (१४) माहेश्वर सूत्रों से भगवान् पाणिनि ने अष्टाध्यायी का विशाल शब्द शिल्प बनाया । पाणिनि का व्याकरण वर्तमान समय में प्राचीन भारतीय शब्द विद्या व्याकरण के रूप में उपलब्ध है । संस्कृत व्याकरण में सर्वप्रथम मूल शब्द के रूपों को अलग किया जाता है । धातु एवं प्रत्यय के भेद को पहचाना प्रत्ययों के अर्थों का निश्चय किया जाना तथा शब्द विद्या का निश्चित एवं पूर्ण शास्त्र तैयार किया जाना होता है। वैदिक पदों को समझने के लिए जितनी आवश्यकता 'यास्क' कृत 'निरुक्त' कृति की है, उतनी ही आवश्यकता व्याकरणशास्त्र की भी है । इसी महत्व को देखते हुए पाणिनीय अष्टाध्यायी को समझना अत्यधिक आवश्यक है । अष्टाध्यायी में सूत्रों का सङ्कलन है, जो वैदिक एवं लौकिक दोनों रूपों में उपलब्ध है । अष्टाध्यायी की शैली अत्यन्त सुबोध है । अष्टाध्यायी विलक्षण रचना कौशल और संयोजन के कारण आज भी पाणिनि का यह शास्त्र शब्द विद्या का उत्कृषटतम निदर्शन कहा जाता है । संस्कृत व्याकरण शास्त्र के त्रिमुनि पाणिनि, कात्यायन एवं पतञ्जलि हैं । पाणिनीय अष्टाध्यायी के पश्चात् इनके सूत्रों पर कात्यायन ने वार्तिक तथा भगवान् पतञ्जलि ने महाभाष्य लिखा तथा महाभाष्य के अनन्तर अनेक व्याख्या ग्रन्थ लिखे गए । वस्तुतः शब्द शास्त्रीय विचार धाराओं और चिन्तन तथा दर्शन की अष्टाध्यायी ज्ञान गंगोत्री है । जिसकी प्रतिष्ठा युगों तक अक्षुण्ण रहेगी ।

बीज शब्द :
सूत्र के प्रकार, पाणिनि एवं अष्टाध्यायी, शैली, कात्यायन एवं पतञ्जलि की दृष्टि ।

भारत वर्ष में व्याकरण को उत्तरा विद्या एवं छ: वेदङ्गों में प्रधान माना गया है । जैसे – व्याकरणं नामेयं उत्तरा विद्या[1] , प्रधानं च षट्षु अङ्गेषु व्याकरणम् । व्याकरण का ध्येय वेद रक्षा करना है । यथा- वेद रक्षाणार्थं ध्येयं व्याकरणम् । केषां शब्दानाम्? वैदिकानां लौकिकानां च ।[2] पाणिनीय अष्टाध्यायी ग्रन्थ में लगभग चार हजार सूत्रों का सङ्कलन है । सामान्यतः लौकिक प्रयोग में सूत्र के अर्थ से तात्पर्य "तन्तु" अथवा "रज्जु" होता है। व्याकरण शास्त्र के सन्दर्भ में सूत्र से आशय तन्तुवत् लघुकाय अथवा सूक्ष्म होता है ।

सूत्र का लक्षण-

अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारवत् विश्वतो मुखम् । अस्तो भमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः ।।[3] लघूनि सूचितार्थानि स्वल्पाक्षरपदानि च । सर्वतः सारभूतानि सूत्राव्याहुर्मनीषिणः ।।[4] लक्षणं हि नाम तद् ध्वनि।[5] लक्ष्य लक्षणे व्याकरणम्- शब्दो लक्ष्यः, सूत्रं लक्षणम्।।[6] शास्त्रीय शब्दावली में सूत्रों के दो प्रकार सामान्य एवं विशेष ये दोनों क्रमशः उत्सर्ग एवं अपवाद कहे जाते हैं। संस्कृत वाङ्मय में सूत्र शब्द का प्रयोग विशेष रूप से पारिभाषिक अर्थ में होता है ।

सूत्र के प्रकार-

संज्ञा च परिभाषा च विधिर्नियम एव च ।
अतिदेशोऽधिकारश्च षड्विधं सूत्रलक्षणम् ।।[7]

इस लक्षण में छः प्रकार के सूत्र वर्णित हैं । उनका उल्लेख क्रमशः इस प्रकार है-

1. संज्ञा- शक्तिनियामकत्वं संज्ञासूत्रत्वम् । यथा- "वृद्धिरादैच्"।[4] संज्ञा के दो भेद हैं (१) कृत्तिम संज्ञा जैसे- लघुः निरर्थकाश्च भवति यथा- टि, घु, घ, भ आदि । (२) अकृत्रिम संज्ञा यथा - महती तथा अन्वर्था भवति यथा- सर्वनाम, उपसर्जन आदि । संज्ञा च नाम यतो न लधीयः । लघ्वर्थ हि संज्ञाकरणम् ।।[8]

2. परिभाषा-

एकदेशस्थिता शास्त्रभवने याति दीपताम् ।
परितो व्यापृतां भाषां परिभाषां प्रचक्षते ।।[9]

यथा- "तस्मिन्निति निर्दिष्टे पूर्वस्य" ।

3. विधि- विधिरत्यन्तमप्राप्तौ... ।[10]

गुणवृद्धिलोपसम्प्रसारणादि कार्यस्य विधानं करोति तत् विधिसूत्रम् यथा- "आद् गुणः" । साक्षाल्लक्ष्यसंस्कारकसाधुत्वप्रकारकबोधजनकत्वं विधित्वम्।[7]

विधि के दो भेद हैं (१) उत्सर्ग विधि यथा- "कर्मण्यण्" । (२) उपवाद विधि यथा- "अतोनुपसर्गेकः" ।

4. नियम- नियमः पाक्षिके सति । अन्य निवृत्तिफलकत्वे सति सिद्धार्थप्रतिपादकत्वं नियमसूत्रत्वम् । विधिसंकोचकत्वं नियमत्वम् । जैसे- "रात्सस्य" ।

5. अतिदेश- अतिदेशो नाम इतरधर्मस्य इतरस्मिन् प्रयोगायादेशः। यथा- "स्थानिवदादेशोऽनल विधौ" ।

प्रकृतात् कर्मणो यस्माद् तत् समानेषु कर्मसु ।
धर्मप्रवेशी येन स्यात् सोऽतिदेश इति स्मृतः । ।[11]

6. अधिकार- स्वदेशे वाक्यार्थ शून्यत्वे सति परदेशे वाक्यार्थ बोधकत्वमधिकारत्वम् । यथा- "धातोः" । अधिकार के तीन भेद हैं । तीनों भेदों का वर्णन क्रमशः इस प्रकार है-

(1) कश्चिद् एकदेशस्थः सर्वं शास्त्रम् अभिज्वलति यथा- प्रदीपः सुप्रविज्वलितः सर्वं वेश्म अभिज्वलति ।

(2) अपरोऽधिकारो यथा- रज्वाय सा वा बद्धं काष्ठमनुकृष्यते तद्वत् अनुकृष्यते चकारेण ।

(3) अपरोऽधिकारः प्रतियोगं तस्यानिर्देशार्थः इति योगे योगे उपतिष्ठति ।

संसार की अति प्राचीन भाषाएँ नियमित व्याकरण के अभाव में दुरुह बन गई हैं। संस्कृत भाषा के गद्य एवं पद्य दोनों एक समान पाणिनि शास्त्र से नियमित होने के कारण सब काल खण्ड में सुबोध बनी रही है। संस्कृत भाषा का जहाँ तक विस्तार है वहीं तक पाणिनीय व्याकरण शास्त्र का प्रमाण है ।

पाणिनि एवं अष्टाध्यायी का महत्व-

महर्षि पाणिनि द्वारा अष्टाध्यायी की रचना की गई है। अष्टाध्यायी नाम से ही स्पष्ट है कि पाणिनीय व्याकरण में आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद (चरण) हैं । पादों की कुल संख्या ३२ एवं सूत्रों की संख्या लगभग चार हजार है। भगवान् पाणिनि का महान् अष्टाध्यायी इस दृष्टि से भी हमारे लिए महत्वपूर्ण है कि यास्क की निरुक्त कृति की तरह उस पर एक ही आचार्य के कर्तृत्व की महता है । पाणिनि के सूत्र अत्यन्त संक्षिप्त हैं । उन्हें छोटा बताने में जिन विविध उपायों से कार्य किया गया वे उनकी मौलिक समझ को प्रकट करते हैं ।

यहाँ संक्षिप्त शैली सर्वथा स्पष्ट है एवं कहीं भी सुरूह नहीं है। जिस कालखण्ड से सूत्रों का अध्ययन-अध्यापन आरम्भ हुआ उस कालखण्ड से आज तक उनके शब्दों के अर्थ स्पष्ट रहे हैं। अष्टाध्यायी की रचना से पूर्व शब्द विद्या का विकास हो गया था किन्तु अष्टाध्यायी जैसे वृहद् सर्वाङ्गपरिपूर्ण शास्त्र के सामने प्राचीन व्याकरण पूर्ववर्ती आचार्यों में केवल यास्क कृत निरुक्त प्राप्त होती है तथा वह भी केवल इस कारण कि उसका ध्येय वैदिक शब्दों का निर्वचन करना था । पाणिनि के काल खण्ड में संस्कृत जनभाषा (बोलचाल/लोकभाषा) थी। यथा- दूर से पुकारना- दुराद्धूतेच।[12] डांट फटकार- भर्त्सने।[13] प्रश्नोत्तर- प्रष्टप्रतिवचने।[14] अभिवादन का उत्तर देना- प्रत्यभिवादेऽशूद्रे।[15] इत्यादि सूत्रों से ज्ञात होता है कि उस काल खण्ड में संस्कृत की व्यवहारिक उपयोगिता अवश्य थी।

शैली–

पाणिनीय व्याकरण शैली की विशेषता इससे है कि उन्होंनें धातुओं से शब्द सिद्धि की पद्धति को स्वीकार किया । इसके लिए उन्होंने लोक में प्रचलित धातुओं का वृहत्त संग्रह धातुपाठ में किया । दूसरी ओर जिस प्रकार धातुओं से संज्ञा शब्द होते हैं उस प्रक्रिया में सामान्य एवं विशेष विधि से बताकर कृदन्त प्रत्ययों की लम्बी सूची दी है । जिस अर्थों में वे प्रत्यय शब्दों में जुड़ते हैं उसका ज्ञान भी कराया है । यह सीधी शैली शब्द-ज्ञान के लिए नितान्त सरल एवं सुबोध सिद्ध हुई ।

शब्द का अर्थ व्यक्ति है या जाति, यह एक पुराना विवादस्पद प्रश्न है । महाभाष्य में इसका विस्तृत शास्त्रार्थ दिया गया है। आचार्य वाजप्यायन का मत था यथा- आकृत्यभिधानाद्वैक विभक्तौ वाजप्यायनः। अर्थात् गो शब्द का अर्थ गो-जाति मात्र है । आचार्य व्याडि का मत था यथा- द्रव्याभिधानं व्याडि । अर्थात् गो शब्द व्यक्ति रूप केवल गौ

का वाचक है । पाणिनि ने उक्त दोनों मतों में सत्यता देखी । एतदर्थ दोनों को अष्टाध्यायी में स्थान दिया । यथा- जात्याख्याया एकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्याम् ।[16] अर्थात् इस सूत्र में यह माना कि शब्द का अर्थ जातिमात्र है। तथा सरूपाणामेकशेष एकविभक्तौ।[17] इस सूत्र में शब्द का अर्थ द्रव्य या एक व्यक्ति माना गया है । पतञ्जलि ने महाभाष्य के 'पस्पशान्हिक' में इस सम्बन्ध में पाणिनि की स्थिति को संक्षेप में स्पष्ट किया है ।

कात्यायन की दृष्टि में पाणिनि-

पाणिनि के सूत्रों पर वार्तिकों की रचना करके कात्यायन ने सूत्रों की पृष्ठभूमि का परिचय दिया । उन्होंनें सूत्रों पर नए विचारों की उद्भावना प्रस्तुत की है । एतदर्थ बहुमुखी समीक्षा से पाणिनि का व्याकरण शास्त्र तप गया । वार्तिकों की रचना करने के पश्चात् स्वयं कात्यायन ने पाणिनि के प्रति अत्यन्त श्रद्धावान् होते हुए अपने अन्तिम वार्तिक में भक्ति भरे शब्दों से पूर्ण किया । यथा- भगवतः पाणिनेः सिद्धम् ।

पतञ्जलि की दृष्टि में पाणिनि-

पाणिनि एवं कात्यायन के शास्त्रों का चिन्तित अध्ययन करते हुए पतञ्जलि ने अपने पाण्डित्य एवं विलक्षण व्यक्तित्व का भी अमिट प्रभाव महाभाष्य में है। पतञ्जलि ने भी कात्यायन के तुल्य पाणिनि के लिए भगवान् पद का प्रयोग किया। उन्होंने कात्यायन को भी एक बार इस विरद से अलंकृत किया।[18] पाणिनि के लिए भाष्यान्त में कहा- भगवतः पाणिनेराचार्यस्य सिद्धम्।[19] पतञ्जलि के काल खण्ड में पाणिनि व्याकरण का अध्ययन आरम्भिक कक्षाओं तक फैल गया था। यथा- आकुमारं यशः पाणिनेः।[20] एपास्य यशसो मर्यादा। काशिका के अनुसार पाणिनि का व्याकरण जब लोक में फैला तो चारों तरफ उनका प्रमाण मानते हुए "इतिपाणिनि" एवं "तत्पाणिनि" ध्वनि सुनाई पड़ने लगी।[21] पतञ्जलि ने पाणिनि को प्राणभूत आचार्य की सम्मानित उपाधि दी । यथा- प्राणभूत आचार्यों दर्भपवित्रपाणिः शुचाववकाशे प्राङ्मुख उपविश्य महता यत्नेन सूत्रं प्रणयति स्म।[22] अर्थात् प्रमाणकोटि में पहुँचे हुए आचार्य ने कुशा से हाथ पवित्र करके पूर्वाभिमुख बैठकर मस्तिष्क के बड़े प्रयत्न से सूत्रों की रचना की । पाणिनि के सन्दर्भ में ऋग्वेदभाष्यकार श्रीवेङ्कटमाधव ने कहा- शाकल्यः पाणिनिर्यास्क इत्यृगर्थपरास्त्रयः।[23] इस प्रकार पाणिनि के विषय में प्रमाण प्राप्त होते हैं।

निष्कर्ष- सभी प्राच्य विद्वानों एवं पाश्चात्य संस्कृतज्ञों ने पाणिनीय अष्टाध्यायी को व्याकरण के क्षेत्र में सर्वोच्च कोटि का ग्रन्थ माना है । जिसके ऊपर महाभाष्य एवं काशिका जैसे प्राणभूत प्रमाणिक ग्रन्थ उपलब्ध हैं। काशिका सूत्रानुसारी ग्रन्थ है । जिसमें अष्टाध्यायी सूत्रों के क्रम से उनका व्याख्यान किया है तथा दूसरा पक्ष प्रक्रिया का है जिसमें सिद्धान्तकौमुदी है । सिद्धान्तकौमुदी में प्रक्रिया द्वारा शब्दों की सिद्धि एवं अर्थ का व्याख्यान होता है। इसी प्रकार अन्य ग्रन्थ भी हैं जिनमें पाणिनीय सूत्रों के व्याख्यान उपलब्ध होते हैं । पाणिनीय अष्टाध्यायी का उद्देश्य अध्ययन करना ही नहीं है अपितु अष्टाध्यायी वेदार्थ के लिए एक साधन भी है । जिसके द्वारा हम वेदार्थ एवं शब्दार्थ का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं । साथ ही उन शब्दार्थों को समझ कर वेद के पदों के अर्थ तक पहुँच सकते हैं ।

संदर्भ:

1. पतञ्जलि, महाभाष्य1.2.32-
2. पतञ्जलि, महाभाष्य पस्पशान्हिक
3. वायुपुराण142/59-
4. वाचस्पतिमिश्र, भामती टीका1/1/1 -
5. पतञ्जलि, महाभाष्य3/1/1-
6. पतञ्जलि,महाभाष्य1/1/1-
7. वरदराज, लघुसिद्धान्तकौमुदि पृष्ट7.
8. पतञ्जलि, महाभाष्य23/1/1-
9. नागेशभट्ट, महाभाष्य उद्योत1/1/2-
10. कुमारिलभट्ट, तन्त्र वर्तीक234/1-
11. सुखानन्दनाथ, शब्दार्थ चिन्तामणि
12. पाणिनि, अष्टाध्यायी 84/2/8-
13. पाणिनि,अष्टाध्यायी95/2/8-
14. पाणिनि,अष्टाध्यायी93/2/8-
15. पाणिनि,अष्टाध्यायी93/2/8-
16. पाणिनि,अष्टाध्यायी58/2/1-
17. पाणिनि,अष्टाध्यायी64/2/1-
18. पतञ्जलि,महाभाष्य3/2/3-
19. पतञ्जलि,महाभाष्य68/4/8-
20. पतञ्जलि,महाभाष्य89/4/1-
21. जयादित्यवामन,काशिका6/1/2-
22. पतञ्जलि,महाभाष्य1/1/1-
23. वेङ्कटमाधव1/8 ,ऋग्भाष्य ,मन्त्रार्थानुक्रमणी-